गजानन माधव मुक्तिबोध

5

जन्म : *13 नवंबर सन् 1917, श्योपुर, ग्वालियर (मध्य प्रदेश)*

प्रकाशित पुस्तकें : *चाँद का मुँह टेढ़ा है, भूरी-भूरी खाक धूल (कविता संग्रह); काठ का सपना, विपात्र, सतह से उठता आदमी (कथा साहित्य); कामायनी-एक पुनर्विचार, नयी कविता का आत्मसंघर्ष, नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, (अब 'आखिर रचना क्यों' नाम से) समीक्षा की समस्याएँ, एक साहित्यिक की डायरी (आलोचना); भारत : इतिहास और संस्कृति*

निधन : *11 सितंबर सन् 1964, नयी दिल्ली में*

हमारी हार का बदला चुकाने आएगा, संकल्पधर्मा चेतना का रक्तप्लावित स्वर,
हमारे ही हृदय का गुप्त स्वर्णाक्षर, प्रकट होकर विकट हो जाएगा।

हार का बदला चुकाने वाले संकल्पधर्मा कवि मुक्तिबोध का पूरा जीवन संघर्ष में बीता। उन्होंने 20 वर्ष की छोटी उम्र में बड़नगर मिडिल स्कूल में मास्टरी की। तत्पश्चात शुजालपुर, उज्जैन, कोलकाता, इंदौर, मुंबई, बंगलौर, बनारस, जबलपुर, राजनाँदगाँव आदि स्थानों पर मास्टरी से पत्रकारिता तक का काम किया। कुछ समय तक पाठ्यपुस्तकें भी लिखीं।

छायावाद और स्वच्छंदतावादी कविता के बाद जब नयी कविता आई तो मुक्तिबोध उसके अगुआ कवियों में से एक थे। मराठी संरचना से प्रभावित लंबे वाक्यों ने उनकी कविता को आम पाठक के लिए कठिन बनाया लेकिन उनमें भावनात्मक और विचारात्मक ऊर्जा अटूट थी, जैसे कोई नैसर्गिक अंत:स्रोत हो जो कभी चुकता ही नहीं बल्कि लगातार अधिकाधिक वेग और तीव्रता के साथ उमड़ता चला आता है। यह ऊर्जा अनेकानेक कल्पना-चित्रों और फैंटेसियों का आकार ग्रहण कर लेती है। मुक्तिबोध की रचनात्मक ऊर्जा

का एक बहुत बड़ा अंश आलोचनात्मक लेखन और साहित्य संबंधी चिंतन में सक्रिय रहा। वे एक समर्थ पत्रकार भी थे। इसके अलावा राजनैतिक विषयों, अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य तथा देश की आर्थिक समस्याओं पर लगातार लिखा है। कवि शमशेर बहादुर सिंह के शब्दों में उनकी कविता–'अद्भुत संकेतों भरी, जिज्ञासाओं से अस्थिर, कभी-दूर से शोर मचाती कभी कानों में चुपचाप राज़ की बातें कहती चलती है। हमारी बातें हमको सुनाती है। हम अपने को एकदम चकित होकर देखते हैं और पहले से अधिक पहचानने लगते हैं।'

मुक्तिबोध की कविताएँ सामान्यत: बहुत लंबी होती है। उन्होंने जो भी अपेक्षाकृत छोटे आकार की कविताएँ लिखी हैं, उनमें से एक है **सहर्ष स्वीकारा है** *जो* **भूरी-भूरी खाक धूल** *में संकलित है। एक होता है-'स्वीकारना' और दूसरा होता है- 'सहर्ष स्वीकारना' यानी खुशी-खुशी स्वीकार करना। जीवन के सब दुख-सुख, संघर्ष-अवसाद, उठा-पटक सम्यक भाव से अंगीकार करने की प्रेरणा यह कविता देती है। कवि को जहाँ से यह प्रेरणा मिली–प्रेरणा के उस उत्स तक भी हमको ले जाती है। उस विशिष्ट व्यक्ति या सत्ता के इसी 'सहजता' के चलते उसको स्वीकार किया था–कुछ इस तरह स्वीकार (और आत्मसात) किया था कि आज तक वह सामने नहीं भी है तो भी आसपास उसके होने का एहसास है–*

मुस्काता चाँद ज्यों धरती पर रात-भर
मुझ पर त्यों तुम्हारा ही खिलता वह चेहरा है!

चूँकि यह एहसास आप्लावनकारी है और कविता का 'मैं' उसकी भावप्रवणता के निजी पक्ष से उबरकर सिर्फ़ विचार की तरह उसे जीना चाहता है क्योंकि वह बृहत्तर विश्व की गुत्थियाँ सुलझाने में उसकी मदद करेगी। वह दिवंगता माँ, पत्नी, बहन, सहचरी कोई भी हो सकती है। सहज स्नेह की ऊष्मा जब विरह में अग्निशिखा-सी उद्दीप्त हो उठी है, थोड़ी-थोड़ी-सी निस्संगता भी एकदम से ज़रूरी हो आई है और वह चाहने लगा है मोह-मुक्ति। चाहने लगा है कि भूलने की प्रक्रिया एक अमावस की तरह उसके भीतर इस तरह घटित हो कि चाँद ज़रा-सा ओट हो ले। अँधेरे से सामना हो तो चित्त की ताकत बढ़े। लगातार का यह भौतिक और मानसिक अवलंब अंदर एक अज्ञात भय भी कायम करता है। खो जाने का भय, खो जाने से भी बड़ा है।

ममता के बादल की मँडराती कोमलता–क्योंकि भीतर पिराती है
बहलाती-सहलाती आत्मीयता बरदाश्त नहीं होती है।

दृढ़ता और तद्जन्य कठोरता भी बड़े मानव-मूल्य हैं, इसलिए भूल जाना भी एक कला है। अति किसी चीज़ की अच्छी नहीं। हर समय की भावार्द्रता भी कमज़ोर करती है। अतिशय प्रकाश से आँखें चौंधिया जाती हैं। इसलिए किसी हद तक वरेण्य है अँधेरा भी-विस्मृति का अँधेरा। आदमी हरदम सब कुछ याद करता चले, तो जीना ही मुश्किल हो जाए। 'तमसो मा

ज्योतिर्गमय' यदि एक प्रकार का सच है तो उतना ही बड़ा सच है 'पाताली अँधेरे की गुफ़ाओं' में डूबना। भूलना 'दंड' सही, फिर भी पुरस्कार मानकर ही ग्रहण करना चाहिए।

धुएँ के बादल भी पूर्ण विस्मृति घटित नहीं कर पाते। यादों का धुँधलका वहाँ भी है। मनुष्य की संपूर्ण चेतना अँधेरा-उजाला, सुख-दुख, स्मृति-विस्मृति के ताना-भरनी से बुनी एक कबीरी चादर है जिसे आत्मा चारों ओर से यानी संपूर्णता में लपेट लेना चाहती है। जीवन का निष्कर्ष यही है कि वहाँ किसी का नहीं क्योंकि सब 'उसकी' परछाईं है।

प्रश्न यहाँ यह उठता है कि 'वह' है कौन? दिवंगता माँ या प्रिया? बृहत्तर जीवन-दर्शन—जो ईश्वर-निरपेक्ष होता हुआ भी उतना ही सर्वव्यापी और आप्लावनकारी है जितना कबीर के राम या वड्‌र्सवर्थ की मातृमना प्रकृति? यह गुत्थी न भी सुलझे तो भी कविता अपनी मर्मस्पर्शिता और द्वंद्वविह्वलता के कारण उतनी ही संगत और विशिष्ट है। साधक और साध्य की एकात्मता, 'तेरा तुझको सौंपता का लागै है मोर' वाला ऐसा निरहंकार विनय पारंपरिक साहित्य से इतर यानी आधुनिक कविता में कम ही दिखाई देता है।

सहर्ष स्वीकारा है

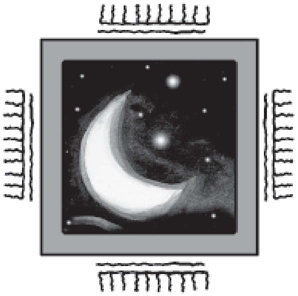

ज़िंदगी में जो कुछ है, जो भी है
सहर्ष स्वीकारा है;
इसलिए कि जो कुछ भी मेरा है
वह तुम्हें प्यारा है।
गरबीली गरीबी यह, ये गंभीर अनुभव सब
यह विचार-वैभव सब
दृढ़ता यह, भीतर की सरिता यह अभिनव सब
मौलिक है, मौलिक है
इसलिए कि पल-पल में
जो कुछ भी जाग्रत है अपलक है–
संवेदन तुम्हारा है! !

जाने क्या रिश्ता है, जाने क्या नाता है
जितना भी उँड़ेलता हूँ, भर-भर फिर आता है
दिल में क्या झरना है?
मीठे पानी का सोता है
भीतर वह, ऊपर तुम
मुसकाता चाँद ज्यों धरती पर रात-भर
मुझ पर त्यों तुम्हारा ही खिलता वह चेहरा है!

सचमुच मुझे दंड दो कि भूलूँ मैं भूलूँ मैं
तुम्हें भूल जाने की
दक्षिण ध्रुवी अंधकार-अमावस्या
शरीर पर, चेहरे पर, अंतर में पा लूँ मैं
झेलूँ मैं, उसी में नहा लूँ मैं

इसलिए कि तुमसे ही परिवेष्टित आच्छादित
रहने का रमणीय यह उजेला अब
सहा नहीं जाता है।
नहीं सहा जाता है।
ममता के बादल की मँडराती कोमलता–
भीतर पिराती है
कमज़ोर और अक्षम अब हो गई है आत्मा यह
छटपटाती छाती को भवितव्यता डराती है
बहलाती सहलाती आत्मीयता बरदाश्त नहीं होती है!!

सचमुच मुझे दंड दो कि हो जाऊँ
पाताली अँधेरे की गुहाओं में विवरों में
धुएँ के बादलों में
बिलकुल मैं लापता
लापता कि वहाँ भी तो तुम्हारा ही सहारा है!!
इसलिए कि जो कुछ भी मेरा है
या मेरा जो होता-सा लगता है, होता-सा संभव है
सभी वह तुम्हारे ही कारण के कार्यों का घेरा है, कार्यों का वैभव है
अब तक तो ज़िंदगी में जो कुछ था, जो कुछ है
सहर्ष स्वीकारा है
इसलिए कि जो कुछ भी मेरा है
वह तुम्हें प्यारा है।

अभ्यास

कविता के साथ

1. टिप्पणी कीजिए; ***गरबीली गरीबी, भीतर की सरिता, बहलाती सहलाती आत्मीयता, ममता के बादल*** ।
2. इस कविता में और भी टिप्पणी-योग्य पद-प्रयोग हैं। ऐसे किसी एक प्रयोग का अपनी ओर से उल्लेख कर उस पर टिप्पणी करें।
3. व्याख्या कीजिए :

जाने क्या रिश्ता है, जाने क्या नाता है
जितना भी उँड़ेलता हूँ, भर-भर फिर आता है
दिल में क्या झरना है?
मीठे पानी का सोता है
भीतर वह, ऊपर तुम
मुसकाता चाँद ज्यों धरती पर रात-भर
मुझ पर त्यों तुम्हारा ही खिलता वह चेहरा है!

उपर्युक्त पंक्तियों की व्याख्या करते हुए यह बताइए कि यहाँ चाँद की तरह आत्मा पर झुका चेहरा भूलकर अंधकार-अमावस्या में नहाने की बात क्यों की गई है?

4. ***तुम्हें भूल जाने की***
दक्षिण ध्रुवी अंधकार-अमावस्या
शरीर पर, चेहरे पर, अंतर में पा लूँ मैं
झेलूँ मैं, उसी में नहा लूँ मैं
इसलिए कि तुमसे ही परिवेष्टित आच्छादित
रहने का रमणीय यह उजेला अब
सहा नहीं जाता है।
   (क) यहाँ अंधकार-अमावस्या के लिए क्या विशेषण इस्तेमाल किया गया है और उससे विशेष्य में क्या अर्थ जुड़ता है?
   (ख) कवि ने व्यक्तिगत संदर्भ में किस स्थिति को अमावस्या कहा है?
   (ग) इस स्थिति से ठीक विपरीत ठहरने वाली कौन-सी स्थिति कविता में व्यक्त हुई है? इस वैपरीत्य को व्यक्त करने वाले शब्द का व्याख्यापूर्वक उल्लेख करें।
   (घ) कवि अपने संबोध्य (जिसको कविता संबोधित है कविता का 'तुम') को पूरी तरह भूल जाना चाहता है, इस बात को प्रभावी तरीके से व्यक्त करने के लिए क्या युक्ति अपनाई है? रेखांकित अंशों को ध्यान में रखकर उत्तर दें।
5. ***बहलाती सहलाती आत्मीयता बरदाश्त नहीं होती है***– और कविता के शीर्षक ***सहर्ष स्वीकारा है*** में आप कैसे अंतर्विरोध पाते हैं। चर्चा कीजिए।

कविता के आसपास

1. अतिशय मोह भी क्या त्रास का कारक है? माँ का दूध छूटने का कष्ट जैसे एक ज़रूरी कष्ट है, वैसे ही कुछ और ज़रूरी कष्टों की सूची बनाएँ।
3. 'प्रेरणा' शब्द पर सोचिए और उसके महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए जीवन के वे प्रसंग याद कीजिए जब माता-पिता, दीदी-भैया, शिक्षक या कोई महापुरुष/महानारी आपके अँधेरे क्षणों में प्रकाश भर गए।
4. 'भय' शब्द पर सोचिए। सोचिए कि मन में किन-किन चीज़ों का भय बैठा है? उससे निबटने के लिए आप क्या करते हैं और कवि की मन:स्थिति से अपनी मन:स्थिति की तुलना कीजिए।

शब्द-छवि

परिवेष्टित - चारों ओर से घिरा हुआ
पिराना - दर्द करना
गुहाओं - गुफाओं
विवर - बिल